Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 SHISRRJ | Volume 1 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

पौराणिक दृष्टि से तीर्थराज प्रयाग

वन्दना देवी
शोधच्छात्रा,
संस्कृत विभाग, कला संकाय,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
वाराणसी, उत्तर प्रदेश, भारत।

शोध आलेख सार– समस्त तीर्थों के अतिरिक्त प्रयाग में अर्न्वेदी माधव, मध्यवेदी के माधव, बाहर्वेदी के माधव के साथ ही अनेक छोटे–छोटे तीर्थों का विस्तृत साम्राज्य फैला हुआ है। इस प्रकार सभी तीर्थों को स्वयं में समाहित करने त्रिवेणी संगम स्थल होने एवं ब्रह्मा द्वारा सर्वप्रथम प्रकृष्ट यज्ञ करने के कारण यह प्रयाग तीर्थराज की पदवी पर अधिष्ठित है।

मुख्य शब्द– पौराणिक, तीर्थराज प्रयाग, भारतीय, संस्कृति, आधुनिक, सांस्कृतिक।

प्राचीन भारतीय संस्कृति से लेकर आधुनिक भारतीय संस्कृति तक के विकास में पुराणों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। इनकी संख्या अष्टादश है। जिसमें भारतीय जीवन का सांस्कृतिक इतिहास निरूपित है। यद्यपि पुराणों का मूल उद्देश्य वेदों का उपबृंहण (विस्तार, पूरण) करना है तथापि दीर्घकालावधि में विकसित होने के कारण इनमें विभिन्न युगों की सांस्कृतिक परम्परा दृष्टिकोचर होती है। इनमें एक तरफ जहाँ उच्चकोटि के दार्शनिक विचारों का प्रतिपादन है वहीं दूसरी ओर जनसामान्य के दृष्टिकोण से भक्ति, ज्ञान, श्रद्धा, विश्वास, यज्ञ, दान, तप, व्रत, पूजा तथा तीर्थों इत्यादि से सम्बन्धित विषय भी निरूपित है। पुराणों में तीर्थराज प्रयाग से पूर्व सर्वप्रथम 'तीर्थ' शब्द की व्युत्पत्ति एवं परिभाषा जानना आवश्यक है।

महान तपस्वी मनीषियों एवं ऋषियों के निवास एवं पद्ममयी नदियों के सेवन से वे विशेष स्थल तीर्थ नामक संज्ञा से सम्बोधित किये जाते हैं। 'तीर्थ' शब्द 'तृप्लवनतरणयोः' धातु से 'पातृतुदिव चित्रृचिसिचिभ्यस्थक (2.7) उणादि सूत्र से अधिकरण अर्थ में 'थक्' प्रत्यय करने पर तथा 'ऋ' को इत्व करके 'उरणरपरः' से रपर करने पर निष्पन्न हुआ है।

यद्यपि तीर्थ शब्द शास्त्र, यज्ञक्षेत्र, उपाय, अवतार ऋषिसेवित जलाशय, पात्र, उपाध्याय, मंत्र इत्यादि अर्थों में प्रयुक्त होता रहा तथापि इसका सर्वाधिक प्रयोग है। आचार्य एवं ऋषियों द्वारा सेवनीय पवित्र नदी एवं सरोवर वाले स्थानों के लिए विशेष रूप से किया जाता है। यही कारण है कि विश्व के समस्त तीर्थ किसी न किसी पवित्र जलाशय के समीप ही स्थित होते हैं। अमरकोषकर ऋषि द्वारा सेवित जल एवं प्रदेश तथा आचार्य को 'तीर्थ' शब्द के रूप में प्रयोग करते हैं–

निपानागमयोस्तीर्थ मृषिजुष्टं जलौ गुरौ।।[1]

इसी प्रकार आचार्य 'हेमचन्द्रकृत अनेकार्थसंग्रहकोष' में तीर्थ शब्द आचार्य गुरू, यज्ञ, पुण्यक्षेत्र, जलप्रदेश अवतरण, ऋषिसेवित, जल, यज्ञ, उपाय एवं सत्र अर्थों में प्रयुक्त हुआ है–

तीर्थे शास्त्रे गुरौ यज्ञे पुण्यक्षेत्रावतारयोः।
ऋषिजुष्टजले सन्निव्युपाये स्त्रीरजस्वपि।।[2]

सर्वप्रथम ऋग्वेद में तीर्थ शब्द का प्रयोग नदी, तट, नदी समीपस्थ क्षेत्र, पुण्य, जलाशय तथा समुद्र तट पर स्थित स्थानों के लिए किया गया है।

आरित्रं वां दिवस्पृथु तीर्थे सिन्धूनां रथः।
धिया युयुज इन्दवः।।[3]

शुक्ल यजुर्वेद के रूद्राध्याय में तीर्थ शब्द प्रयोग आदि अर्थों (उव्वट एवं महीधरभाष्य के अनुसार) में हुआ है–

ये तीर्थानि 'प्रचरन्ति सृकाहन्ता निवंगिणः।
तेषां सहस्त्रयोजनेऽवधन्वानि तन्यासि।।[4]

महाभारत में 'तीर्थ' शब्द इसी अर्थ में परिभाषित है–

पवित्रमृषिर्भिजुष्टं पुण्यं पावनमुत्तमम्।[5]

तीर्थ वस्तुतः वे पवित्र स्थल हैं जहाँ निवास करने वालों में उनके आचार–विचार एवं व्यवहार में पूर्ण सात्त्विक भावना विद्यमान रहती है। उस स्थल का इतना अधिक महत्व रहता है कि वहाँ जाने मात्र से व्यक्ति के विचार स्वयं सत्य की ओर उन्मुख हो जाते हैं। और वे धार्मिक एवं पुण्यजनक कार्यों में प्रवृत्त हो जाते हैं। वह सम्पूर्ण वातावरण ही सात्त्विकता से ओत–प्रोत प्रतीत होता है। जिससे वहाँ आने वाला प्रत्येक व्यक्ति स्वतः ढलने लगता है। यही कारण है कि शास्त्रों में तीर्थयात्रा के प्रति विशेष आदर भाव देखा जाता है। जैसा कि पद्मपुराण में कहा गया है–

तीर्थेषु लभ्यते साधू रामचन्द्रपरायणः।
यद्दर्शनं नृणां पापराशिं दहति तत्क्षणे।।
तस्मात् तीर्थेषु मन्तव्यं नरैः संसारभीरुभिः।
पुण्योदकेषु सततं साधुश्श्रेणिविराजिषु।।[6]

यदि यह समझा जाए कि मन बहलाने के उद्देश्य से किसी तीर्थ स्थल में जाने पर हमें पुण्य प्राप्ति अथवा तीर्थ का फल प्राप्त हो जाएगा तो ऐसा नहीं है क्योंकि जब तक तीर्थयात्रा सम्पूर्ण विधि विधानों से न की जाए तब तक अभीष्ट फल की प्राप्ति नहीं होगी। जैसा कि पद्मपुराण के इस श्लोक से इस बात की पुष्टि होती है–

'विधिना गच्छतां नृणां फलावाप्तिर्विशेषता।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन तीर्थयात्रा विधिं चरेत्।।
यस्य हस्तौ च पादौ च मनश्चैव संसयतम्।
विद्यातपश्च कीर्तिश्च स तीर्थफलमश्नुते।।[7]

अर्थात् जो व्यक्ति सम्पूर्ण विधि–विधानपूर्वक तीर्थ यात्रा करता है, जिसके हाथ–पैर और मन भलिभाँति सुसंयत हो वहीं विद्या, तप, कीर्ति एवं तीर्थ फल का भागी होता है।

स्कन्दपुराण के काशीखण्ड में भी यही बात कही गयी है–

अक्रोधनोऽमलमतिः सत्यवादी दृढ़व्रतः।
आत्मोपमश्च भूतेषु स तीर्थफलमश्नुते।।[8]

अर्थात् जो व्यक्ति काम, क्रोध, लोभ का परित्याग तीर्थ में प्रविष्ट होता है उसे तीर्थ यात्रा करने का पूर्ण अधिकार है।

सम्पूर्ण विश्व में जितने पवित्र स्थल हैं उनमें भारतभूमि सर्वाधिक पवित्र है। और उसमें भी प्रयाग अत्यन्त पवित्रतम है।

'प्रयाग' शब्द 'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'यज् धातु से घञ् प्रत्यय करने पर निष्पन्न होता है। व्युत्पत्तिपरक रूप से देखें तो 'प्रकृष्टो याग प्रयागः' अर्थात् यहाँ विशेष प्रकार का यज्ञ करने के कारण इसे प्रयाग कहा गया है। जैसा कि स्कन्दपुराण में भी कहा गया है कि यहाँ ब्रह्मा ने प्रकृष्ट याग किया था इस कारण इसे प्रयाग कहते हैं–

प्रकृष्टं सर्वयागेभ्यः प्रयागमिति गीयते।[9]

इसे तीर्थराज कहकर भी सम्बोधित किया जाता है। क्योंकि यह देवनदी गंगा एवं यमुना इन दोनों नदियों का पवित्रतम् संगम है। यहीं अन्तःसलिला भगवती सरस्वती भी गुप्त रूप से आकार मिल जाती है।

यथा–

सितासिते सरिते यत्र सं"थे तत्राप्लुतासो दिवमुत्पत्ति।
ये वै तन्वं विसृजन्ति धीरास्ते जनासो अमृतत्त्वं भजन्ते।।[10]

वाल्मीकि रामायण में किये प्रयाग के विशिष्ट वर्णन से यह ज्ञात होता है कि उस समय उस स्थान में गंगा और यमुना की विशिष्ट कल–कल ध्वनि गुंजायमान रहती थी चारों दिशाओं में यज्ञ का धूम व्याप्त था। भगवान श्रीराम प्रयाग का वर्णन करते हुए इस प्रकार कहते हैं–

'प्रयागमभितः पश्य सौमित्रे धूममुत्तमम्।
अग्निर्भगवता केतुं मन्ये सन्निहितो मुनिः।।

नूनं प्राप्तां स्म सम्भेदं गंगायमुनयोर्वयम्।

तथा हि श्रूयते शब्दो वारिणोर्वारिधर्षणः।।

दारुणि परिभिन्नानि वनजैरूपजीविभिः।

छिन्नाश्चाप्याश्रमे चैते दृशयन्ते विविधा द्रुमाः।।[11]

अग्निपुराण में इसे पृथ्वी को जंघा कहकर सम्बोधित किया गया है।[12]

उपर्युक्त ग्रन्थों के साथ–साथ अन्यान्य पुराणों में भी प्रयाग की महिमा का विस्तृत गुणगान प्राप्त होता है। यथा–पद्मपुराण में तीर्थराज प्रयाग का वर्णन करते हुए उसे अन्त में 'स तीर्थ राजो जयति' कहकर सम्बोधित किया गया है–

ब्राह्मी न पुत्री त्रिपथागास्त्रिवेणी सभागमेनासत् योगमात्रम्।

यत्राप्लुता न ब्रह्म पद नयन्ति, सतीर्थराजो जयन्ति प्रयाग।।[13]

अर्थात् सरस्वती यमुना और गंगा का जहाँ पवित्र संगम है, जहाँ स्नान करने से व्यक्ति ब्रह्म पद को प्राप्त कर लेता है। उस तीर्थराज प्रयाग की जय हो। पद्मपुराण में ही और एक स्थल पर इसे तीर्थों में सर्वाधिक उत्तम तीर्थ बताया गया है–

ग्रहाणां यथा सूर्यो नक्षत्राणां यथा शशी।

तीर्थानामुत्तमम् तीर्थ प्रयागाख्यमनुत्तमम्।।[14]

अर्थात् जिस प्रकार समस्त ग्रहों में सूर्य नक्षत्रों में चन्द्रमा श्रेष्ठ है उसी प्रकार समस्त तीर्थों में तीर्थराज प्रयाग श्रेष्ठ है।

मत्स्य पुराण भी इसे सर्वपूजनीय कहकर सम्बोधित करता है–

तथा सर्वेषु लोकेषु प्रयाग पूजयेद् बुधः।

पूज्यते तीर्थ राजस्तु सत्यमेव युधिष्ठिर।।[15]

पद्मपुराण और मत्स्यपुराण की भाँति कूर्मपुराण भी इसे तीर्थराज प्रयाग के रूप में वर्णित करता है। प्रयाग में कुम्भपर्व का आयोजन इनकी महत्ता और अधिक बढा देता है। धार्मिक मान्यता है कि मकर राशि पर सूर्य के संचार के समय समस्त देवता एवं सभी तीर्थ प्रयाग के संगम में लीन हो जाते हैं।

अथर्ववेद में कुम्भ उस स्थल विशेष को कहा गया है जो आकाश में ग्रहराशि के योग से होता है। प्रयाग में होने वाले कुम्भपर्व के आयोजन की उत्पत्ति से सम्बन्धित सौर्यिक विधान का उल्लेख वेदों एवं पुराणों में अनेक स्थलों पर प्राप्त होता है। अथर्ववेद में कहा गया है कि जब मकरराशि में सूर्य का प्रवेश होता है और वृष राशि में बृहस्पति प्रवृष्ट होता है तो प्रयाग में दुर्लभ कुम्भ का योग बनता है–

मकरे च दिवानाथे वृषगे च बृहस्पतौ।

कुम्भयोगो भवेतत्त्व प्रयाग ह्यति दुर्लभम्।।[16]

इस कुम्भ पर्व का आयोजन प्रत्येक वर्ष माघ महीने में होता है। जब सूर्य चन्द्रमा मकरराशि में चले जाते हैं परन्तु महाकुम्भ तब होता है जब बारह वर्ष में बृहस्पति के क्रान्तिवृत्तीय परिक्रमा के बाद तेरहवें वर्ष में पुनः मेष राशि में आने पर तथा चन्द्र एवं सूर्य के मकरराशि में चले जाने पर–

मेश राशिगते जीवे मकरे चन्द्रभास्करौ।

अमावस्यो तदा योग कुम्भान्तीर्थ नामके।।[17]

ऋग्वेद में कुम्भपर्व को समस्त पापों को नष्ट करने वाला बताया गया है–

जघान वृत्रं स्वधितिबनेव सरोज पुरो अदन्न सिन्धुना।

विभेद गिरिं नवभिन्न कुम्भनाम इन्द्रो स्वयुग्भिः।।[18]

शुक्ल यजुर्वेद में इसे शारीरिक सुख देने वाला कहा गया है–

कुम्भो वनिष्टुर्जनिता शचीभिर्यस्मिन्नग्रे योन्यां गर्भोन्तः।

रताशिर्व्यक्तः शतधाऽउत्सो दुहे न कुम्भी स्वधा पितृभ्यः।[19]

कुम्भ पर्व का महायोग मात्र उज्जैन, हरिद्वार, नासिक और प्रयाग इन चार स्थलों पर बनता है। अब यह प्रश्न उठता है कि मात्र इन्हीं चार स्थलों में ही क्यों कुम्भ का योग बनता है। इस कुम्भ पर्वोद्भव सम्बन्धी कथा विभिन्न पुराणें में प्राप्त होती है।

स्कन्दपुराण एवं गरुडपुराण में यह कथा इस प्रकार प्राप्त होती है–

देवताओं और दैत्यों के मध्य जब समुद्रमंथन हुआ तो उसमें चौदह रत्न निकले। ये चौदह रत्न थे– लक्ष्मी, कौस्तुभमणि, कल्पवृक्ष, वारुणी, धन्वन्तरि, अश्व, कालकूट विष शारंधर, पांचशंख और अमृत।

इन चौदह रत्नों में अन्तिम रत्न 'अमृत' था। वह अमृत एक कुम्भ अर्थात् घड़े में स्थित था। जिस घड़े को देवताओं के निर्देश से जयंत ने चुरा लिया। परन्तु दैत्यगुरू शुक्राचार्य ने दैत्यों को देवताओं की इस चतुराई के विषय में बता दिया। जिसके परिणामस्वरुप भयंकर दैवासुर संग्राम आरम्भ हो गया। इसी संघर्ष में उस अमृत कलश से अमृत की कुछ बूँदे छलककर प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन और नासिक में गिरी इसी कारण मात्र इन्हीं स्थलों पर ही कुम्भ पर्व का आयोजन होता है।

प्रयाग को तीर्थराज कहे जाने के अन्य कारण भी है जैसे–मार्कण्डेय पुराण में ऋषि मार्कण्डेय ने प्रयाग को गार्हपत्य अग्नि के रूप में माना तथा प्रतिष्ठानपुर को आवहनीय एवं अलर्कपुर को दक्षिणात्य माना।

समस्त तीर्थ इसमें आकार निवास करते हैं ऐसी मान्यता है यहाँ आठों लोकपाल, ऋषि, गन्धर्व, देवर्षि तथा ब्रह्मर्षि आदि आकर प्रयाग की आराधना करते हैं। साथ ही साठ करोड तीर्थों की यह निवास स्थली है। तीर्थराज प्रयाग अनेक तीर्थों का स्थल है। यहाँ सामान्य रूप से त्रिवेणी, द्वादश माधव, सोमेश्वर भरद्वाज, आश्रम नागवासुकी, अक्षयवट तथा शेषावतारी, बलराम का मन्दिर एवं स्वयं प्रयागतीर्थ दर्शनीय स्थल है। जिसका उल्लेख सर्वत्र प्रचलित इस पद्य में प्राप्त होता है–

त्रिवेणीं माधवं सोऽयं भरद्वाजं च वासुकिम्।
वन्देऽक्षयवंट शेषं प्रयागं तीर्थनायकम्।।[20]

परम्परागत प्रयाग में स्थित विभिन्न तीर्थों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है।

वर्तमान समय में प्रयाग में लगभग 34 तीर्थों का विवरण प्राप्त होता है जिसमें से कुछ प्रमुख तीर्थों का संक्षिप्त परिचय इस प्रकार है–

(1) अक्षयवट– यह किला में स्थित यमुना का तट है।

(2) प्रतिष्ठानपुरी– यह गंगा के पूर्व में बहिर्वेदी प्रदेश में स्थित है जो वर्तमान समय में झूँसी के नाम से जाना जाता है।

(3) कम्बलाश्वर नाग– यह अरैली नैनी क्षेत्र में छिबुकी स्टेशन के समीप स्थित है।

(4) सांध्यवट– यह प्रतिष्ठानपुरी झूँसी में स्थित है।

(5) हंसप्रयतन तीर्थ– यह स्थल भी गंगा से पूर्ववर्ती क्षेत्र में स्थित माना जाता है। वर्तमान समय में यह एक कूप के रूप में अवस्थित है।

(6) नागवासुकी– यह स्थान गंगा तट पर दारागंज क्षेत्र अवस्थित हैं।

(7) भोगवती– यह प्रजापिता ब्रह्मा का क्षेत्र विशेष माना जाता है।

(8) शेषतीर्थ– नागवासुकी के आगे लगभग 4 किमी0 गंगा तट पर शेष मन्दिर में अवस्थित है। जिसे वर्तमान समय में बलदेवजी के मन्दिर के नाम से जाना जाता है। वर्तमान समय में इसे सलोरी के नाम से जाना जाता है।

(9) कोटितीर्थ– गंगातट पर स्थित यह स्थान शिवकुटी के नाम से प्रसिद्ध है।

(10) दशाश्वमेध– यह स्थान दारांगज में स्थित है। इसमें दशाश्वमेधेश्वर भगवान शिव स्थित है।

(11) उर्वशी पुलीन– यह तीर्थ झूँसी में स्थित है इसे उर्वशीकुण्ड भी कहते हैं।

ऋणमोचन तीर्थ– यह तीर्थ प्रयाग से दक्षिण एवं यमुना के उत्तरी तट पर अवस्थित है जो जिले से सम्बद्ध स्थान है।

सरस्वती कुण्ड– यह तीर्थ स्थल ऋणमोचन एवं आदित्यतीर्थ का समीपस्थ स्थान है।

बड़े हनुमान जी– यह तीर्थ किले के समीप किले से पूर्व तथा त्रिवेणी क्षेत्र से पश्चिम उत्तर तट में स्थित हैं। यहाँ हनुमान जी की अत्यन्त विशाल लेटी हुई मूर्ति है। इसे बड़े हनुमान का मन्दिर भी कहते हैं।

मनकामेश्वर– यह तीर्थ स्थल भगवान सोमेश्वर के नाम से भी प्रख्यात है। यह त्रिवेणी के दक्षिण पूर्वी स्थल पर अवस्थित है। यह सोमेश्वर महादेव के नाम से प्रसिद्ध है।

भरद्वाज आश्रम– यह स्थल वर्तमान समय में कटरा क्षेत्र में प्रयाग विश्वविद्यालय से पूर्ववर्ती स्थान गंगा से पश्चिम की ओर लगभग दो किलोमीटर की दूरी पर अवस्थित है।

अलोपी मन्दिर– अलोपी शंकरी अथवा ललिदेवी के रूप में प्रसिद्ध यह दुर्गा जी के 51 शक्तियों में से एक है। इस स्थल पर भगवती सती की हाँथ की उंगुली गिरी थी। यह स्थान अलोपी बाग में अवस्थित है।

माधव– भगवान माधव अपने बारह रूपों में इस क्षेत्र में निवास करते हैं। भगवान माधव गंगा के मध्यभाग गंगा के पूर्वभाग और प्रतिष्ठानपुरी (झूँसी) यमुना के दक्षिण भाग का अलर्क (अरैल) भगवान माधव इन समस्त क्षेत्रों में व्याप्त है।

उपर्युक्त इन समस्त तीर्थों के अतिरिक्त प्रयाग में अर्न्वेदी माधव, मध्यवेदी के माधव, बाहर्वेदी के माधव के साथ ही अनेक छोटे–छोटे तीर्थों का विस्तृत साम्राज्य फैला हुआ है।

इस प्रकार सभी तीर्थों को स्वयं में समाहित करने त्रिवेणी संगम स्थल होने एवं ब्रह्मा द्वारा सर्वप्रथम प्रकृष्ट यज्ञ करने के कारण यह प्रयाग तीर्थराज की पदवी पर अधिष्ठित है।

सन्दर्भग्रन्थ सूची :–

1. अमरकोष– 3.3.86
2. अनेकार्थसंग्रहकोष– 2.220
3. ऋग्वेद– 1.46.8
4. यजुर्वेद (रुद्राध्याय)– 16.61
5. महाभारत (वनपर्व)– 88.18
6. पद्मपुराण – 19.16, 17
7. पद्मपुराण (पातालखण्ड)– 13.23, 24
8. स्कन्दपुराण (काशीखण्ड)– अध्याय–6
9. स्कन्दपुराण (काशीखण्ड)– 7.49
10. ऋ0स0– 10,17,15 के अनन्तर परिशिष्ठ खिलपाठ अध्याय–3.12, 14
11. वाल्मीकि रामायण– 2.54.57
12. अग्निपुराण
13. पद्मपुराण– 6.23.34
14. पद्मपुराण
15. मत्स्यपुराण– 105.55
16. नारदपुराण– 2.63.7

17. अथर्ववेद– 19.53.3
18. ऋग्वेद – 10.83.7
19. शुक्लयजुर्वेद– 19.87
20. परम्परागत